ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292RNI
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 144-147**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

बिहार में जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार

डॉ0 सत्यनारायण प्रसाद

यूजीसी–नेट उत्तीर्ण एवं पी–एच0 डी0 (समाजशास्त्र) पटना विश्वविद्यालय, पटना (बिहार) भारत

Received-31.10.2024, Revised-07.11.2024, Accepted-13.11.2024 **E-mail : akbr786ali888@gmail.com**

सारांशः ***कृषि संबंधों के जिस चरित्र का उद्भव 1793 के स्थायी बंदोबस्त प्रणाली को लागू करने के परिणामस्वरूप हुआ, उससे छुटकारा पाए बिना न तो कृषि को विकसित किया जा सकता है और न कृषि संबंधों में परिवर्तन, यह आजादी की लड़ाई के दौरान ही साबित होने लगा था। बिहार में किसान सभा के माध्यम से स्वामी सहजानंद सरस्वती और राहुल सांकृत्यायन के नेतृत्व में किसानों ने जता दिया था कि उनमें उस व्यवस्था से छुटकारा पाने की कितनी कसमसाहट है। आजादी के बाद किसानों के हितों एवं आकांक्षाओं को नजरअंदाज करना भारत और बिहार के नए शासकों के लिए संभव नहीं रह गया था। इसलिए भूमि सुधार के प्रयास शुरू हुए।***

कुंजीभूत शब्द– जमींदारी, उन्मूलन, भूमि सुधार, बंदोबस्त प्रणाली, कसमसाहट, आकांक्षा, नजरअंदाज, सामाजिक–आर्थिक विषमता

सन् 1944 में जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में कृषि सुधारों से संबंधित एक कमेटी बनी, जिसमें जमींदारी उन्मूलन की अनुशंसा की गयी। इसके बाद 1948 में भारत सरकार ने एक दूसरी कमेटी जे. सी. कुमारप्पा की अध्यक्षता में बनाई। इन कमेटियों की अनुशंसा पर ही देश में भूमि सुधार के प्रयास हुए। राज्य सरकारों से आग्रह किया गया कि वे तीन उद्देश्यों (1) जमींदारी उन्मूलन (2) काश्तकारी नियमों में सुधार तथा (3) भूमि हदबंदी को ध्यान में रखकर संबंधित राज्यों के लिए भूमि सुधार कानून बनाएं तथा लागू करें। चूंकि भूमि राज्य सूची में है, इसलिए यह जिम्मेदारी राज्य सरकारों पर डाल दी गई। इसके पीछे सरकारी मंशा कई तरह की थी – बिचौलियों (जमींदार) के हाथों से वास्तविक जोतदारों के हाथों में जमीन का हस्तांतरण, अनाज की उपज बढ़ाना और सबसे बढ़कर ग्रामीण आबादी में वर्तमान सामाजिक–आर्थिक विषमता को नियंत्रण में लाना तथा एक समतामूलम समाज की रचना करना।[1]

बिहार में स्वामी सहजानंद सरस्वती, कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के जयप्रकाश नारायण एवं कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ इंडिया के कार्यानंद शर्मा की अगुआई में वहां के किसानों ने जमींदारी उन्मूलन के लिए जबर्दस्त आंदोलन किया था। इन्हीं आंदोलनों के बाद में जब 1937 और 1946 में बिहार में कांग्रेस की सरकार बनी तो उसे भूमि सुधार के प्रति अपनी निष्ठा अपने प्रस्ताव में जाहिर करनी पड़ी। अपने प्रस्ताव में कृषि व्यवस्था में वैधानिक उपायों के जरिये परिवर्तन की बात रखने के लिए कांग्रेस को बाध्य होना पड़ा।

जमींदारी उन्मूलन का इतिहास जितना तूफानी बिहार का रहा है उतना किसी अन्य राज्य का नहीं। कांग्रेस के घोषित उद्देश्य और तथाकथित प्रयासों के बावजूद जमींदारी उन्मूलन कानून बनने में पांच साल लग गए। जमींदारी उन्मूलन विधेयक पेश करने वाला बिहार देश का पहला राज्य था, लेकिन जमींदारों और भूस्वामियों के प्रबल विरोध के कारण अनेक वर्षों तक उसे कानून बनने से रोके रखा गया। इसका विरोध कितना प्रबल था, इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि विरोधियों की पंक्ति में देश के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेंद्र प्रसाद भी खड़े थे। राजनीतिक मंचों से जमींदारी उन्मूलन का विरोध जहां राजेंद्र प्रसाद कर रहे थे, वहीं दरभंगा महाराज अदालत और अखबारों के माध्यम से कर रहे थे, जबकि विधानसभा में सर चंद्रेश्वर प्रसाद नारायण सिंह राजा रामगढ़ विरोध कर रहे थे।[2] जिस दिन बिहार विधानसभा में जमींदी उन्मूलन विधेयक पेश होने वाला था, उसके एक दिन पहले के.बी. सहाय जो राज्य राजस्व मंत्री थे, एक ट्रक दुर्घटना में घायल हो गए। कहा जाता है कि यह दुर्घटना नहीं, साजिश थी और कथित रूप से इस साजिश के सूत्राधार थे राजा रामगढ़[3] लेकिन विधानसभा के अंदर और बाहर अपार समर्थन से के.बी. सहाय ने जमींदी उन्मूलन विधेयक 12 सितंबर, 1947 को अंततः पेश कर ही दिया। उस दिन राजस्व मंत्री के हाथों और सिर पर पट्टियां बंधी थीं, जिस पर खून के दाग स्पष्ट दिख रहे थे।[4]

1947–49 के बीच जमींदारों ने रैयतों और नेताओं को न सिर्फ डरा–धमका कर उनका मनोबल तोड़ने की कोशिश की बल्कि कई बार उन्हें शारीरिक हानि भी पहुंचाई। अपने को सुरक्षित रखने एवं अपने सामाजिक–आर्थिक वर्चस्व को कायम रखने के लिए इसी बीच जमींदारों ने 'जमींदार यूथ लीग' नामक संगठन भी बनाया। यहां तक कि जमींदारों ने निजी सेना भी बनाई और रैयतों द्वारा जोते–बोए जा रहे बकाश्त जमीन को ताकत के बल पर हासिल करने की कोशिश की[5] इस प्रक्रिया में जमींदारों एवं रैयतों के बीच बेगुसराय जिले के बिहटा, चंपारण के रामगढ़वा, मुंगेर के बड़हिया, दरभंगा के बल्लीपुर, पथुआ और मधेपुर, बिहारशरीफ के महुरी, भोजपुर के दरिगांव, पटना के अलवरपुर, गया के नबीगंज तथा पूर्णिया के कुरसेला आदि के अलावा कई अन्य जगहों पर भी संघर्ष हुए, जिसमें बहुत से रैयत मारे गए और घायल हुए। कुछ जमींदारों और उनके कारिंदों को भी चोटें आई। जब जमींदारों ने देखा कि उनका प्रत्यक्ष तरीका पर्याप्त नहीं है, तो उन्होंने पुलिस बल की मदद ली। कानून और व्यवस्था के रखवालों के हाथों भी अनेक रैयत मारे गए6 जमींदारों ने जमींदारी उन्मूलन कानून को रोकने के लिए जमीन–आसमान एक कर दिया। जमींदारी उन्मूलन को रोकने के लिए या कम–से–कम उसे स्थगित करने के लिए उन्होंने ताकत के इस्तेमाल के अलावा विधायिका और अदालत का भी इस्तेमाल किया। कांग्रस नेतृत्व को भी उन्होंने अपने पक्ष में करने की कोशिश की।

जमींदारों की जब उक्त सारी कोशिशें विफल रहीं तो उन्होंने के.बी. सहाय जैसे जमींदारी उन्मूलन के समर्थक नेता को बदनाम करने की कोशिश की। यहां तक कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को भी प्रभावित करने की कोशिश की गयी। गांधी जी ने पटना में प्रार्थना सभा के दौरान अपने भाषण में कहा कि जमींदारों की तरफ से उन्हें शिकायतें मिली हैं कि रैयत और किसान कानून और

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

व्यवस्था का पालन नहीं कर रहे हैं। यह आपराधिक है। गांधी जी के इस बयान ने जमींदारों का मनोबल तो बढ़ाया लेकिन उनका मनोबल जल्दी ही तब गिर गया उन्होंने प्रार्थना के बाद अपने भाषण में पहली बार खुलकर जमींदार विरोधी बयान दिया। उन्होंन कहा कि जमींदारी व्यवस्था को खत्म होना ही है। उन्होंने इस बात का भी जिक्र कि बहुत से जमींदार किसानों और रैयतों को आतंकित करने के लिए निजी सेनाएं बना रहे हैं, लेकिन यह भी कहा कि 'मैं चाहता हूँ कि यह समाचार झूठा हो'[7] इसके बावजूद जमींदारों ने अपनी काशिशें नहीं छोड़ी। जमींदारों के एक समूह ने राष्ट्रपति डॉ. राजेंद्र प्रसाद के पास तार भेजकर अपील की कि वे जमींदारी उन्मूलन को रोक कर देश को गृहयुद्ध से बजाएं।[8] राजेंद्र बाबू ने सर्वाजनिक रूप से जमींदारी उन्मूलन का विरोध तो नहीं किया, क्योंकि यह कांग्रेस के चुनाव घोषणा पत्र का हिस्सा था, लेकिन उसे स्थगित करने का यथासंभव प्रयत्न किया। इतना ही नहीं, जमींदारी उन्मूलन की दिशा में त्वरित प्रयत्न करने के कारण राजेंद्र बाबू ने बिहार के राजस्व मंत्री के.बी. सहाय को पत्र लिखकर फटकार भी लगाई।[9]

इसके बावजूद कि जमींदारी उन्मूलन बिहार विधानसभा में पेश होने के अंतिम चरण में था, सरदार पटेल जैसे कांग्रेस के दिग्गज नेता ने क्षतिपूर्ति का मामला उठा दिया। उन्होंने कहा : "कांग्रेस सरकार अपने चुनाव घोषणा पत्र के अनुसार जमींदारों को पर्याप्त क्षतिपूर्ति देने के लिए प्रतिबद्ध है। उन्हे समाजवादियों और साम्यवादियों से डरने की जरूरत नहीं है। बिना क्षतपूर्ति के जमींदारी खत्म करना डकैती होगी.....क्षतिपूर्ति नाम के लिए नहीं, बल्कि पर्याप्त होनी चाहिए।[10] इसके जवाब में किसान सभा ने क्षतिपूर्ति को कानूनी डकैती करार दिया।[11]

विधानसभा में भी जमींदारों ने जमींदारी उन्मूलन विधेयक को पारित होने से रोकने के लिए भरपूर कोशिश की। उनकी तरफ से तीन सौ संशोधन पेश किए गए तॉकि विधेयक जल्दी पारित न हो। लेकिन अंततः बिहार सरकार को 1947 में यह विधेयक पारित करना पड़ा और गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बाद 1948 में बिहार जमींदारी उन्मूलन कानून के रूप में इसे प्रकाशित किया गया। ऐसा नहीं है कि कानून बन जाने के बाद जमींदार हार मानकर चुप बैठ गए। इसके विपरीत जमींदारों ने इसकी सवैधानिकता और वैधता को बार–बार अदालती चुनौती दी। बहरहाल 1952 में जाकर बिहार भूमि सुधार कानून– 1950 के रूप में लागू हुआ। इसके बाद जमींदारों ने सरकार के साथ असहयोग का रास्ता अपनाया और लगान की सूची और संबधित गांवों के रिकार्ड देने से साफ मना कर दिया। सरकार के पास इसकी कोई जानकारी नहीं थी कि किसके पास कितनी जमीन है या कौन रैयत है और कौन उर्द्ध–रैयत[12] महत्वपूर्ण भू–अभिलेखों और रेकार्ड के अभाव में राज्य की भू–संपदा और उसके स्वरूप के बारे में सरकार का अज्ञान बना रहा। जमींदारों ने सरकार की इस अज्ञानता का जमकर फायदा उठाया।

जमींदारी उन्मूलन के नए कानून ने मालगुजारी वसूलने के अधिकार के साथ–साथ पेड़ों, जंगलों, तालाब तथा खनिज पर भी जमींदारों के अधिकार को समाप्त कर दिया। ये सारे अधिकार अब राज्य के पास आ गए। इसी कानून के जरिए ऐसी जमीन का लगान देने की जिम्मेदारी से भी उन्हें मुक्त कर दिया गया। इससे जमींदारों को जो आर्थिक नुकसान हुआ, उसकी क्षतिपूर्ति का कानूनी आवश्वासन दिया गया। बिहार के जमींदारों को क्षतिपूर्ति के रूप में 1510 मिलियन रूपये और उत्तर प्रदेश के जमींदारों को 1634 मिलियन रूपये दिए गए। उल्लेखनीय है कि प्रति एकड क्षतिपूर्ति की दर बिहार और उत्तर प्रदेश में ही सबसे ज्यादा थी, जैसा कि नीचे दी गई तालिका से स्पष्ट होता है।

तालिका – 1

स्थायी बंदोबस्ती वाले राज्यों से पूर्व बिचौलियों को दिया गया मुआवजा

राज्य	जमीन का रकवा	कुल मुआवजा (मीलियन एकड़ में)	प्रति एकड़ मुआवजा (मीलियन रूपये में)
बिहार	39.64	1.510	39
पश्चिम बंगाल	28	560	20
असम	1.67	37	22
उत्तर प्रदेश	52.52	1.634	31
मद्रास	17.42	207	15

स्त्रोत : ज्ञानेश्वर ओझा लैंड प्राब्लम एंड लैंड रिफार्म, (नई दिल्ली : सुल्तान चंद एंड संस)

क्षतिपूर्ति को इस नीति से इतना तो जाहिर होता हीं है कि सरकार पूर्व जमींदारों को नाराज नहीं करना चाहती थी जिनका ग्रामीण इलाकों के सामाजिक नेतृत्व पर गहरी पकड़ थी।

जमींदारी तो समाप्त कर दी गई, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि जमीन पर उनके सारे अधिकार समाप्त हो गए। सर तथा खुदकास्त जमीन के अलावा खास संपत्ति रखने की उन्हें भी इजाजत थी।[13] खुदकास्त जमीने वे जमींने थीं जो जमींदारी उन्मूलन के पहले निजी खेती के नाम पर जमींदारों के अधिकार में थीं। सरकारी परिभाषा के अनुसार निजी खेती में जमींदारों को व्यक्तिगत रूप से शांमिल होना जरूरी नहीं था, बल्कि इसके अंतर्गत यह व्यक्ति भी आता था, जो रैयतों द्वारा या मजदूर रखकर खेती करवाता था और उसकी देखरेख स्वयं करता था या अपने परिवार के किसी सदस्य के मार्फत करवाता था या तनख्वाह पर मैनेजर[14] निजी खेती के नाम पर जमींदारों ने खूब फायदा उठाया। इस प्रावधान के जरिये जमींदारों ने उन हजारों रैयतों, किसानों को कानूनी रूप से बेदखल कर दिया, जो साबित नहीं कर सके कि वह जमीन उनकी थी और पांपरिक रूप से वे उस जमीन पर खेती करते आए थे।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

कानूनी रूप से बेदखल करने के अलावा जमींदारों ने ताकत के आतंक से भी रैयतों को यह कहने के लिए मजबूर किया कि वे दिहाड़ी या नौकर के रूप में उस जमीन पर खेती कर रहे थे। इस तरह निजी जमीन के प्रावधान का फायदा उठाते हुए जमींदारों ने अपनी जमीन का दायरा और बढ़ा लिया। बिहार सरकार के राजस्व विभाग के आकलन के अनुसार ऐसी जमीन का रकबा 15 लाख एकड़ था।[15]

सन् 1950 के आंकड़ों के मुताबिक उस समय राज्य में 739 जमींदार घराने थे, जबकि स्थायी बंदोबस्त वाले इस्टेट की संख्या 21772 थी। ये इस्टेट सरकार को सलाना भू–राजस्व के रूप में एक करोड़ आठ लाख रूपये देते थे। मालूम हो कि आजादी मिलने के बाद भी इसकी सीमा नहीं बढ़ायी गयी थी।

आर्थिक विषमता पर जमींदारी उन्मूलन का सबसे प्रमुख प्रभाव यह पड़ा कि रैयत और जोतवाद, विशेषकर छोटे रैयत, जोतदार रातोंरात भूमिहीन मजदूर में तब्दील हो गए।[16] जहां ऐसा नहीं हुआ वहां भी रैयतों की स्थिति कोई अच्छी नहीं रही। जमींदारों ने केवल उसी जमीन को रैयतों के पास रहने दिया, जिससे उन्हें कोई आर्थिक नुकसान नहीं था।

भूमि हदबंदी कानून : भूमि सुधार (यदि का जाए तो) का दूसरा चरण था– भूमि हदबंदी कानून। बिहार में भूमि हदबंदी कानून 1961 में बना और इसके साथ ही बना फाजिल जमीन अधिग्रहण अधिनियम, लेकिन कानून में इतने छिद्र थे कि जमींदारी जाने के बाद भी जमींदारों ने अपनी जमींदारी बचा ली। लचीले प्रावधानों का फायदा उठाकर वे काफी जमीन पर अपना अधिकार रखने में सफल रहे। कुछ खास तरह की जमीन को हदबंदी से बाहर रखा गया था। उदाहरण के लिए – जिस जमीन पर चाय, कॉफी और रबर की खेती हो, बाग–बगीचे हों, पशुपालन होता हो या वहां पर डेयरी हों। इस कानून में हिन्दू परिवार के प्रत्येक सदस्य को जमीन रखने का हक दिया गया। इसके अलावा 22 अक्टूबर, 1959 के पहले किए गए जमीन के सारे हस्तांतरण वैध घोषित कर दिए गए। बिहार के जमींदारों ने अपने बेटे–बेटी, नाती–पोते और सच्चे–झूठे संबंधियों के नाम जमीनें करवा लीं। इस दौरान गाय–भैंस, नौकर–चाकर, घोड़े, कुत्ते, अजन्मा बच्चे और यहां तक कि देवी–देवताओं के नाम पर भी जमीनें लिखायी गयीं।[17] एक आकलन के अनुसार 1952,62 के दौरान छह लाख एकड़ जमीन का बेनामी हस्तांतरण हुआ।[18]

जमींदारों की इस सफलता में उनके धन और चतुराई के अलावा बिहार की नौकरशाही ने भी बहुत बड़ा भूमिका निभायी। मंत्रियों और अफसरों के साथ साठगांठ के बिना जमींदारों के लिए ऐसा करना संभव नहीं था। राजनेता और अफसरों में से ज्यादा सामंती पृष्ठभूमि के ही थे। कानून बनाने वाले और उसका पालन करने वाले दोनों ही एक वर्ग से थे। इसलिए यह अन्यथा नहीं कि उनमें एकता थीं। भूमि सुधारों के प्रति राज्य की सरकारें कितनी प्रतिबद्ध रही है इसका अंदाजा इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि मार्च 1984 तक कुल खेती योग्य जमीन का 1.26 प्रतिशत हिस्सा ही कानून के अंतर्गत अधिग्रहण किया जा सका और इसका 63.14 प्रतिशत ही भूमिहीनों में वितरित हो सका। यॉनि मार्च 1984 तक कुल खेती योग्य भूमि का 0.80 प्रतिशत हिस्सा ही वितरित हुआ। वर्ष 1983,84 तक मध्य बिहार के कुछ चुनिंदा जिलों में फाजिल भूमि के अधिग्रहण और वितरण का ब्यौरा इस प्रकार रहा:

तालिका – 2

जिलों के नाम	अधिग्रहित भूमि	वितरित भूमि (एकड़ में)	कुल भूमि में फाजिल भूमि का प्रतिशत
पटना	2638	1780	0.25:
नालंदा	461	398	0.10:
गया	9167	6267	0.98:
नवादा	2444	1733	0.72:
औरगंबाद	2539	1339	0.49:
भोजपुर	4099	2424	0.50:
रोहतास	4738	2018	0.46:

इसका मतलब यह नहीं निकाला जाना चाहिए कि जमींदारी उन्मूलन व्यर्थ था। यह सही है कि बेनामी लेनदेन के जरिये भूस्वामी अपनी ज्यादा जमीन बचाने में कामयाब रहे, लेकिन इसके कुछ स्पष्ट प्रभाव भी देखने को मिले। कमजोर और छोटे जमींदार बदली परिस्थिति में अपने साम्राज्य पर नियंत्रण रखने में अक्षम और असफल रहे और वे स्वेच्छा से शहरी आबादी का हिस्सा बन गए। रोजगार की तलाश में पुलिस, फौज में भर्ती हो गए या शहर में जा बसे। इनकी जगह मजबूत और संपन्न रैयतों के अलावा धनी और मध्यम किसानों ने ले ली। जाति के लिहाज से देखा जाए तो विस्थापित होने वालों में सबसे ज्यादा संख्या राजपूतों और कायस्थों की थी और इनका स्थान लिया यादव, कुर्मी और कोइरी जैसी मध्यवर्ती जातियों ने। ऊँची जातियों में भूमिहारों ने इस प्रक्रिया में अपनी जमीन का दायरा व रकबा बढ़ाया। जाति प्रधान समाज में इस परिघटना का बहुत बड़ा राजनीतिक महत्व था। शायद यह कहना गलत नहीं होगा कि बिहार में नक्सली आंदोलन और उसके खिलाफ खड़ी निजी सेनाएं बहुत हद तक इसी परिघटना की पैदाइश हैं।

उधर इस पूरी प्रक्रिया से समाज के सबसे निचले पायदान पर खड़े भूमिहीन कृषि मजदूरों, दूसरे शब्दों में दलितों की स्थिति में कोई बदलाव नहीं आया। शायद भूमि सुधार का यह उद्देश्य भी नहीं था। जमींदारी उन्मूलन के गर्भ से मध्यवर्ती जातियों में पैदा हुए नव धनी किसानों की स्थिति स्थिर और मजबूत होने के साथ ही भूमिहीन खेतिहार मजदूरों के साथ उनके संघर्ष शुरू हो गए। कहने

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

की आवश्यकता नहीं कि ऊंची जातियों के भूस्वामियों के साथ–साथ मध्यवर्ती जातियों के नव कुलकों ने भी दलित भमिहीन मजदूरों का शोषण करना शुरू कर दिया। इस तरह हम देखते हैं कि भूमि सुधार प्रक्रिया से भूमिहीन मजदूरों को न सिर्फ अलग रखा गया, बल्कि उनके लिए वह एक नई विपत्ति लेकर आया।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डब्ल्यू. सी. नील, 'लैंड रिफॉर्म इन उत्तर प्रदेश', इंडिया (एजेंसी फार इंटरनेशनल डेवलप्मेंट, स्प्रिंग रिव्यु) 1970, पृ0 42.
2. अरविंद नारायण दास, 'रिपब्लिक ऑफ बिहार' पृ. 35 और पीजेंट अनरेस्ट एंड सोसियो–इकॉनामिक चेंज, 1900–1980,पृ0 186.
3. अरविंद नारायण दास, 'रिपब्लिक ऑफ बिहार'।
4. सर्चलाइट, पटना, 13 सितंबर, 1947.
5. बकाश्त जमीन उसे कहा जाता था जिसका लगान देने में विफल होने के कारण जमींदार रैयतों से वापस ले लेते थे।
6. सर्चलाइट, 9 जनवरी, 6 अक्टूबर, 1947.
7. अरविंद नारायण दास, 'एग्रेरियन अनरेस्ट'।
8. एफ.टी. जान्नुजी की पुस्तक 'एग्रेरियन क्राइसिस इन इंडिया : ए केस ऑफ बिहार'।
9. वही।
10. सर्चलाइट, 10 जनवरी, 1948.
11. हूंकार, पटना, 29 मार्च, 1947.
12. डेनियल थार्नर, 'दी एग्रेरियन प्रॉस्पेक्ट इन इंडिया' (दिल्ली, 1956) पृ0 19, जान्नुजी, 'लैंड रिफार्म इन बिहार, 1970, पृ. 23, 24.
13. डेनियल थार्नर, पृ. 24.
14. संयुक्त प्रांत में जमींदारी उन्मूलन कमेटी, खंड–1, (इलाहाबाद, 1948)।
15. जी. ओझा, 'लैंड प्रॉब्लम एंड रिफॉर्म', नई दिल्ली, पृ0 58.
16. आनंद चक्रवर्ती, 'सम आस्पेक्ट्स ऑफ इनइक्वालिटी इन रूरल इंडिया : ए सोसियोलाजिकल पर्सपेक्टिव (संपादित) आंद्रे बेते, 'इक्वालिटी एंड इनइक्वालिटी' दिल्ली, पृ. 156.
17. उर्मिलेश, 'बिहार का सच' प्रकाशन संस्थान, दिल्ली, 1991, पृ. 39.
18. जी. ओझा, पृ. 125.

*****